बी. डी. पांडे स्मृति व्याख्यान

भारत, हिंदुस्तान और इंडिया

श्री गोपालकृष्ण गांधी

31 **मार्च**, 2012

mÙkjk[k.M lok fuf/k lk;koj.k f'k{kk lLFkku
vYekMk

इस सभा में उपस्थित सज्जन दिवंगत श्री भ भैरब न दत्त पांडे को मुझ से कहीं बेहतर जानते थे। मुझे उनको जानने का ौ ा य म ा, परंतु उन्हें मानने का अहोभाग्य ज़रूर मिला। और उनके व्यक्तित्व की जानकारी भी मुझे बारबार मिलती रही और इतना मैंने अवश्य ताड़ लिया कि उनमें कुछ ऐसे गुण थे, जिन्हें हम आज मशाल लिए अंधेरे में ढूंढ़ते हैं, पाते नहीं।

श्री बी डी पांडे इंडियन सिविल सर्विस के आकाश के भटके सितारों में नहीं थे, न ही धूमकेतु, जो कि अब आया और अब ग़ायब। वे उन ग्रहों में एक थे, जो कि अपनी ज्योति स्थिर रखते हैं और बदलते मौसमों से अविचलित उस नभ के ऐसे सदस्य होते हैं, जिन्हें अपनी प्रगति से नहीं, बल्कि क्रम से और कर्म से मतलब है। क्रम और कर्म, दोनों। अपने काम के लिए पंक्ति-भेद करना, क्रम को तोड़ना, औरों के पथ में बाधक होना, यह उनसे न होता था। अतएव उनका सम्मान इसलिए मात्र नहीं था कि वे प्रशासन में दक्ष थे, बल्कि इसलिए कि उनको वफ़ादारी और ताबेदारी का अंतर मालूम था, निष्ठा और चापलूसी का अंतर मालूम था, अधिकार और अधिकारवाद का भेद मालूम था, गर्व और अहंकार का फ़र्क मालूम था। आकांक्षा जो है, वह महत्वाकांक्षा से भिन्न होती है। भैरब दत्त जी यह अपने अंतस में जानते थे। समसामयिकता क्या होती है और समयपूजा क्या होती है, यह भी वे अच्छी तरह जानते थे। वे इतने ‘आनेवाले कल’ के कभी न बने कि बहुरूपी कहलाएं, वे इतने बीते कल के भी न रहे कि पुरातन के भग्नावशेष दिखें। और जब अनेक पदावलियों को सुशोभित कर, सक्रिय कर, सम्मानित कर, उन्होंने विराम पाया, विश्राम पाया, तब काल के बदलाव से असंतोष में नहीं, उससे बहस करते हुए, लड़ते-भिड़ते हुए नहीं, बल्कि, विमला-जी के साथ एक अंबरीय बगुल-युग्म समान उस सूर्यांश में एक लालित्य के साथ विलीन हुए, उस अर्क के समान, जो कि अपने अवतलन के क्षणों में आकाश को लालिमा प्रदान करता है।

आज मैं श्रीमती विमला पांडे का उल्लेख किए बिना नहीं रह सकता। मेरे मित्रोदार मित्र और अलमोड़ा के भूतपूर्व कलेक्टर श्री केशव देसिराजू के अनुग्रह से, मुझे विमला-जी से मिलने के मौक़े हुए। विमला-जी की शालीनता, उनकी तेहज़ीब, और उनकी बुद्धि अनुपम थी। किसी प्राचीन युग में वे भास्कर-नंदिनी लीलावती रही होंगी। उनकी देह जितनी भारहीन थी, उतना ही उनका मानस सारगर्भित था। थोड़े से शब्दों में वे बहुत कुछ कहने की क्षमता रखती थीं।

आजकल बहुत से शब्दों में बहुत थोड़ा कहा जाता है। और शायद इस स्मृति व्याख्यान में मैं कुछ ऐसा ही करूंगा।

उस गरिमामयी दांपत्य को अपना प्रणाम अर्पित करते हुए और उनके पुत्र और मेरे आत्म-बली मित्र श्री ललित पांडे को इस अवसर के लिए हृदयज धन्यवाद देते हए आप सबों की अनुमति से, निर्धारित विषय पर अपने विचार खोलता हूं।

'भारत', 'हिंदुस्तान' और 'इंडिया' - तीन नाम। तीनों सही, तीनों वैध, तीनों अपनी-अपनी जगह में पुख़्ता।

तो फिर?

आप पूछ सकते हैं : 'उन पर यह व्याख्यान क्यूं? क्या आपकी आत्म-श्लाघा के लिए मात्र?'

उस तीखे सवाल में तुक है। मेरे चारित्र्य-रसायन में आत्म-श्लाघा शक्तिमान् है, मुझमें 'मुझ-जैसा' बहुत है, मेरी ख़ुदी में ख़ुदबीनी भरी है। वरना ऐसी वक्तव्य-शृंखला में शामिल होता, जिसमें मुझसे आगे तवारीख़ी सद्र-ए-रियासत-जम्मू-कश्मीर डॉ कर्ण सिंह-जी और आज के नायब सद्र-ए-हिंद डॉ हामिद अंसारी बोल चुके हैं? रश्मि-रेखाओं को संवार रहे मयूरों के बीच कबूतर की टर ...

लेकिन इस शीर्षक में, इस विषय के चयन में, उस ईगो के परे कुछ और भी है, जिस पर इस जैसी सभा में आत्म-विचार उचित हो सकता है, वाजिब औ लाजिम ह सक्त ह

तो आपकी अनुमति से प्रस्तु त करत हूं, पश करता हूं प्रज़ेंट करता हूं 'भारत, हिंदुस्तान और इंडिया' की कुछ तहों को। तहें अंतर्लिप्त हैं, जैसे लपेटे हुए शॉल की तहें होती हैं... उसकी थान एक है, बुनाई एक, नर्माई एक, खुरदुराई एक, पर उसकी हर लंबी तह स्वावलंबित होती है, अपने में लिप्त, अपनी गर्मी बनाए हुए, अपनी नर्मी में प्रसन्न और अपनी सीमा के मोड़ पर अगली तह से सिमटी हुई।

तो बस? हो गई बात ख़त्म? आप पूछ सकते हैं, 'भारत, हिंदुस्तान, इंडिया - तीनों चलते हैं, इंडिया में मिली-जुली ज़ुबान चलती है, बस इतना ही कहना था तो कह दिया है आपने, और कहने को रहता क्या है - चले, चलें?'

कुछ रहता है। 'भारत' में बहुत कुछ रहता है, 'भारत' में इंडिया रहता है। और हिंदुस्तान? वो कहां है?

हिंदुस्तान रहता है वहां, जो कि नामों से आगे है, ज़ुबानों से, वर्णनों से, विवरणों से आगे है, जो कि मायना रखता है हमारे समाज की उस अंतर्वस्तु से, जिसको हिंदुस्तानी में कहते हैं, 'सिफ़त'। सिफ़त? नाउ व्हाट ऑन अर्थ इज़ दैट?

उर्दू तालिबी-इल्म महारानी विक्टोरिया को उनके दुभाष अब्दुल करीम ने ग़ालिबन समझाया होगा, 'योर मेजेस्टी, देयर इज़ अ वर्ड... सिफ़त... योर मेजेस्टी वांट्स टु अंडरस्टैंड योर मेजेस्टीज़ क्रॉउन ज्वेल, यू मस्ट सी सिफ़त... 'सिफ़त' मीन्स, योर मेजेस्टी, 'क्वालिटी', 'इनर क्वालिटी', 'इसेंस'... लाइक, योर मेजेस्टी योर सिफ़त कैन बी डिस्क्राइब्ड एज़ 'इम्पीरियल ग्रेंजर'...'

यह वार्तालाप काल्पनिक है, उसका वजूद महज़ मेरे ख़्याल में है। लेकिन मैं मानना चाहता हूं कि इस पर मलिका ने शायद अब्दुल से पूछा होगा 'एंड अब्दुल व्हाट इज़ योर ओन 'सिफ़त'?' कुछ सहमकर, झिझकते हुए, साफ़गोई के एक लमहे में अब्दुल करीम ने कहा हो सकता है 'माय 'सिफ़त', मेजेस्टी... माय 'सिफ़त'... आई हैव लॉस्ट इट, योर मेजेस्टी... इन प्रिटेंडिंग टु बी एन इंडियन प्रिंस इन लंदन, एन अंग्रेज़ साहिब इन आगरा, व्हेन एक्चुअली आई एम ओनली अ मुख़लिस हियर, योर मेजेस्टीज़ सर्वेंट, आई हैव गेन्ड टू फ़ैंसी ड्रेसेस - वन फ़ॉर लंदन एंड वन फ़ॉर आगरा - बट हैव लॉस्ट माय रियल 'सिफ़त'...'

हमारे वालिदैन 'सिफ़त' का, इस अरबी-फ़ारसी लफ़्ज़ का हमसे ज़्यादा इस्तेमाल करते थे। जैसा कि वे हमसे ज़्यादा इस्तेमाल करते थे सूती कपड़ों का, बे-रईसी ऊन का, ग़रीब दिया-सलाई का, माटी की बाती का, रूई की वर्तिका का, कड़क भूरे गुड़ का, अलाव की धीमी आंच का, तपे हुए तवे का, हाथ के पिसे सुफ़ूफ़ का हथेलियों से गुंधे आटे का, कलम-सियाही का, शीतल सुराही का। उन सब चीज़ों में अपनी एक सिफ़त थी, समझिये एक शराफ़त थी। उन वस्तुओं के उत्तराधिकारियों में, उन असबाब के आल औलाद में, उनकी नस्ल में, सिफ़त कम है, इफ़्फ़त कम है। नाम है, रुआब-दाब है, पर सिफ़त...

तब क़द्र ज़्यादा थी, अब क़ीमत ज़्यादा है। 'सुमन' कह गए हैं - शिवमंगलसिंहजी 'सुमन' - 'कहीं भली है कटुक निबोरी कनक कटोरी के मैदा से...'

आज का विषय - भारत, ि ु ा र इ ि य - हमारी उस सिफ़त से मतलब रखता है, जिसकी बदौलत मुंशीजी (यानी मुंशी प्रेमचंद) 'इलाहाबाद' का प्रयोग कर सकते थे और प्रयाग का इस्तेमाल भी। 'शतरंज के खिलाड़ी' का यह हिस्सा लीजिए : 'नवाब वाजिब अली पकड़ लिए गए थे और सेना उन्हें किसी अज्ञात स्थान को लिए जा रही थी... मिर्जा ने कहा : 'हुज़ूर नवाबसाहिब को ज़ालिमों ने क़ैद कर लिया है।' मीर : 'होगा, यह लीजिए, शह।' मिर्जा : 'जनाब ज़रा ठहरिये। इस वक़्त इधर तबीयत नहीं लगती... बेचारे नवाबसाहिब इस वक़्त ख़ून के आंसू रो रहे होंगे' मीर : 'रोया ही चाहें। यह ऐश वहां कहां नसीब होगा। यह किश्त!' मिर्जा :... 'कितनी दर्दनाक हालत है।' मीर : 'हां, सो तो है ही - यह लो, फिर किश्त!...'' मुंशीजी लिखते हैं : 'आज तक किसी स्वाधीन देश के राजा की पराजय इतनी शांति से, इस तरह ख़ून बहे बिना न हुई होगी।'

इन जुमलों में भारत का उल्लेख है, हिंद का जिक्र, इंडिया की पहचान। इन जुमलों में हिंदी की झलक है, उर्दू की महक है। और नेपथ्य से 'ज़ालिमों' के उस एक लफ़्ज़ में अंग्रेज़ी हुकूमत की तुतलाहट।

तो पूछ सकते हैं आप : 'अच्छा, तो आपका इशारा हमारी 'विविधता-में-एकता' की परंपरा से है, क्यूं जी?' जी नहीं, मेरा संकेत किसी नारे या किसी 'क्लीशे' पर नहीं टिका है। वह एक रवैये से जुड़ा है, एक रिवाज से, एक इल्म-ए-रूह से, एक मनोभाव से, जो कि आज जीर्ण हुआ जा रहा है।

एक दूसरे संदर्भ में मैंने हाल में कहा था कि आज हमारी सियासत का जिस्म - सियासत-ए-हिंद का जिस्म - बुलंद है, पर उसकी रूह, नासाज़। इस ही तरह में यहां कह सकता हूं कि भारत का तन बलवान है, हिंदुस्तान दुर्बल, मंद। निराला के शब्द याद आते हैं : 'स्नेह निर्झर बह गया है, रेत-सा तन रह गया है...'

भारत बलवान है, हिंदुस्तान दुर्बल, और इंडिया? दोस्तो, इंडिया है, 'एयर इंडिया' की तरह - 'अंडर बेल-आउट एंड मैंटेनेंस'। समय ने उस पर ज़ख़्म लगाए हैं, और उस ही समय ने उसको मरहम-पट्टियों से बांधा भी है। इलाज में या फिर समझिये रिपेयर की ख़ातिर, एक परमानेंट स्कैफ़ोल्डिंग में अध-छिपा, अध-खुला, कभी राष्ट्रीयता और समाजवाद की एक आंख से तो कभी अंतर-राष्ट्रीयता और उदारवाद की दूसरी आंख से, इंडिया ज़माने को देख रहा है और ज़माने को दिख रहा है।

इन मिले हुए हालात के पीछे एक मिली हुई तवारीख़ है।

मैं बहुत पीछे नहीं जाऊंगा। पिछली सदी को ही लें।

हमारा संविधान मूल रूप में अंग्रेज़ी में लिखा गया है। उस भाषा में नहीं, जिसको उस ही संविधान ने 'राजभाषा' का नाम दिया है, बल्कि अंग्रेज़ी में। यह इतिहास का सत्य है। उसका हिंदी संस्करण जो है, वह अनूदित है, मूल नहीं। और उस संविधान के उद्घाटनीय शब्द हैं : 'इंडिया दैट इज़ भारत...' यह चार शब्द गंभीर विचार और विवाद के बाद अंकित हुए। बात केवल नाम की नहीं थी। बात थी आत्म-वर्णन की, आत्म-निश्चय की, यानी ख़ुद की पहचान की, सेल्फ़-डेफिनेशन की। संविधान सभा में इस प्रारूपित सूत्रीकरण को जब शिब्बनलालजी सक्सेना ने देखा तो तिलमिला गए। स्वतंत्र भारत में 'वंदे मातरम' के प्राबल्य के उस समर्थक ने 15 नवंबर 1948 के दिन सभा में कहा 'इंडिया दैट इज़ भारत' नहीं चलेगा, हमें कहना चाहिए, 'द नेम ऑफ़ द यूनियन शैल बी भारत'। यूपी से चुने हुए शिब्बनलालजी और सीपी-बिरार के सेठ गोविंददासजी, दोनों हिंदी के भीतरी प्रदेशों से थे।

फिर दूर दक्खिन से आए संस्कृतविद् श्री अनंतशयनम् आयंगर, जो बाद में स्पीकर लोकसभा बने, उठे और सामंजस्य के पक्ष में बोले : 'द... सबस्टिट्यूशन ऑफ़ नेम्स - भारत, भारतवर्ष, हिंदुस्तान फ़ॉर द वर्ड इंडिया इन आर्टिकल 1, क्लॉज़ (1)... रिक्वायर्स सम कंसिडरेशन।'

बात स्थगित हुई, लगभग एक साल तक। सत्रह सितंबर 1949 के दिन संविधान सभा ने मुद्दा फिर से उठाया। डॉ आंबेडकर का प्रारूपी आर्टिकल 1 क्लॉज़ (1) जो था : 'इंडिया, दैट इज़ भारत शैल बी अ यूनियन ऑफ़ स्टेट्स' बहस का मुआमिला बना। सेठ गोविंद दास फिर से उठे और श्री हरि विष्णु कामथ के साथ बोले कि सूत्रीकरण होना चाहिए : 'भारत, ऑर इन इंग्लिश लैंग्वेज, इंडिया शैल बी अ यूनियन ऑफ़ स्टेट्स...'। दोनों ने कहा 'इंडिया' तो सिंधु नदी लांघने पर यूनानियों ने उस इलाक़े को नाम दिया, बस, वरना भारत, 'भारत' ही रहता।

इतवार 18 सितंबर, 1949 को सभा फिर मिली। (ग़ौरतलब है कि संविधान सभा सप्ताहांत में भी काम करती थी, अब की तरह नहीं।) श्री कामथ टुक द फ़ील्ड एंड मूव्ड दैट फ़ॉर द वर्ड्स इन द ड्राफ़्ट 'इंडिया, दैट इज़ भारत, शैल बी अ

यूनियन ऑफ़ स्ट स', द फ़ॉलोइंग बी सबस्टिट्यूटेड : 'भारत, ऑर इन इंग्लिश लैंग्वेज, इंडिया, शैल बी अ यूनियन ऑफ़ स्टे '।

पर उन्होंने एक विकल्प भी दिया : 'हिंद, ऑर इन द इंग्लिश लैंग्वेज, इंडिया, शैल बी अ यूनियन ऑफ़ स्टे '', कुड ऑलसो बी कंसिडर्ड। तो इस तरह 'भारत' और 'हिंद' दोनों सदन के पटल पर रखे गए। श्री कामथ ने और कहा : 'इट इज़ कस्टमरी अमंग मोस्ट पीपुल्स ऑफ़ द वर्ल्ड टु हैव व्हाट इज़ कॉल्ड अ नामकरण ऑर अ नेमिंग सेरेमनी फ़ॉर द न्यू-बॉर्न। इंडिया एज़ अ रिपब्लिक इज़ गोइंग टु बी बॉर्न वेरी शॉर्टली एंड नेचरली देयर हैज़ बीन अ मूवमेंट इन द कंट्री अमंग मेनी सेक्शंस - आलमोस्ट ऑल सेक्शंस - ऑफ़ द पीपुल दैट दिस बर्थ ऑफ़ द न्यू रिपब्लिक शुड बी अकम्पनीड बाय अ नामकरण सेरेमनी एज़ वेल... सम से, व्हाय नेम द बेबी एट ऑल? 'इंडिया' विल सफ़ाइस...!' इस बानी में हरि विष्णु-जी काफ़ी देर बोलते गए... बोलते गए। फिर एक सदस्य से रहा न गया। वे उठे। सभापति बाबू राजेंद्र प्रसाद को संबोधित करते हुए बोले : 'इज़ इट नेसेसेरी टु हैव ऑल दिस? आई डु नॉट अंडरस्टैंड द परपज़ ऑफ़ इट... इट मे बी वेल इंट्रेस्टिंग इन सम अदर प्लेस... आई एम वेरी सॉरी, बट देयर ऑट टु बी सम सेंस ऑफ़ प्रपोर्शन, इन व्यू ऑफ़ द लिमिटेड टाइम ऑफ़ द हाउस।' सदस्य और कोई नहीं- डॉ आंबेडकर थे।

राजेन बाबू ने फ़ैसला सुनाया कि कामथ अपना संशोधन संक्षेप में प्रस्तुत करें, और चुन लें - भारत या हिंद, दोनों नहीं चलेगा। सदस्य ने 'भारत' चुना। बहस हुई। बहस क्या, समझिए, फिर से आलाप हुआ, वार्तालाप हुआ, प्रथमा, मध्यमा, अंतरा... डॉ आंबेडकर सबुरी से सुनते गए...

बारी आई बोलने की बनारस नंदन पंडित कमलापति त्रिपाठी की। पंडितजी बोले थे शुद्ध हिंदी में, पर मैं अंग्रेज़ी उद्धरण देता हूं: 'सर, आई एम एनामॉर्ड ऑफ़ द हिस्टोरिक नेम - भारत... द गॉड्स हैव द कीन डिज़ायर टु बी बॉर्न इन द सेक्रेड लैंड ऑफ़ भारत।' और फिर वे वार्तालाप में ले आए स्वयं श्री राम को। पंडितजी ने कहा कि भारत में एक गूंज है। कौन-सी गूंज? कैसी गूंज? भारत के नाम में एक ध्वनि है। कैसी ध्वनि? वह ध्वनि है, जो 'ट्वैंगलिंग द कोर्ड ऑफ़ द बो' - रामबाण के कंपन से झंकृत स्वर, सुस्वर, प्रतिस्वर - '(व्हिच) सेंट इकोज़ थ्रू द हिमालयाज़, द सीज़ एंड द हेवन्स,' यानी जिसकी गूंज उठी हिमालय पर, सागर पर, अंबर पर...' भारत...

डॉ आंबेडकर से अब और बर्दाश्त न हो सका। खड़े हुए, और राजेन बाबू से उन्होंने पूछा 'इज़ ऑल दिस नेसेसरी, सर? देयर इज़ अ लॉट ऑफ़ वर्क टु बी डन।' पंडित कमलापति त्रिपाठी, पर वे विवेकी कांग्रेसी भी थे।

सदन की भावना देखकर, ड्राफ्टिंग कमेटी के चेयरमैन के रुख़ को देखकर, और शायद पंडित जवाहरलाल नेहरू के तावपूर्ण चेहरे को देखकर, पंडित कमलापति त्रिपाठी ने विद्या छोड़ी, विवाद छोड़ा, और पकड़ा - विवेक। स्वर बदला, प्रतिस्वर बदला, बाबासाहेब का ज्वर देखकर, त्रिपाठी-जी ने सुर भी बदला। अब उन्होंने डॉ आंबेडकर को बधाई दी कि अपने प्रारूप में संविधान के निर्माण-स्वरूप डॉ आंबेडकर 'भारत' को ले तो आए, भले ही 'इंडिया' के बाद ही। अंबर पर न भी सही, 'भारत' दूसरे नंबर पर तो है... फिर त्रिपाठी-जी बोले 'संविधान में भारत के प्रवेश से, हमारे देश की आत्मा लौट आई है...' इस ही को शायद कहते हैं 'कंसेंसस बिल्डिंग'।

श्री एचवी कामथ के संशोधन - 'भारत' को 'इंडिया' के आगे लगाने के मसौदे पर वोटिंग हुई, 'बाय अ शो ऑफ़ हैंड्स'। श्री कामथ के संशोधन के समर्थन में - यानी 'भारत दैट इज़ इंडिया' के समर्थन में - 38 हाथ उठे, डॉ आंबेडकर के यानी 'इंडिया दैट इज़ भारत' के प्रस्ताव के समर्थन में 51 हाथ। बहरहाल, 13 वोटों के अंतर से, 'इंडिया दैट इज़ भारत' पारित हुआ, 'इंडिया जो कि भारत है' हमारा देश बना।

बहरहाल हम सबों ने एक बढिया विधान पाया, 'इंडिया' का शुभनाम आया, 'भारत' ने सम्मान कमाया, पर इस सब को देख नुक्कड़ पर बैठे, बेचारा और बेगाना-सा 'हिंदुस्तान' मुस्कराया... पास उस ही के बैठे नन्हे से तराने ने अब सांस के नीचे, सूखे लबों से, रुखे मिजाज़ से गुनगुनाया... इक़बाल का भूला गीत... हिंद ने तराने को देखा, तराने ने हिंद को, फिर दोनों हाथ एक-दूसरे के थामे बोले हौले-हौले 'हम बुलबुलें...'

कुछ इस ही तरह हमारे नए 'एंथम' के लिए, गुरुदेव के 'जन गण मन' और बंकिम के 'वंदे मातरम' को लेकर चर्चा हुई थी। चयन अंत में गुरुदेव की Ñfr का ह , पर हमारे विवेक ने बंकिम की रचना को भी एक विशेष स्थान दिया, वह नेशनल एंथम न ही सही, नेशनल सॉन्ग बना। मित्रो, आज हम एक बेहतरीन राष्ट्रीय गान - नेशनल एंथम - के उत्तराधिकारी हैं, एक अद्भुत राष्ट्रीय

गीत - नेशनल सॉन्ग - के भी। इक़बाल का ‘सारे जहां से अच्छा’ कम मशहूर न था उन दोनों से, उनसे कम ज़ुबां पर नहीं खेला था, पर आज वह न ‘गान’ कहलाता है न ‘गीत’। तिस पर भी उसके fryLe d¨ nf£,, उसकी न हार हुई न जीत, न ही आज उसमें राष्ट्रीय गान से कम है जान, या फिर राष्ट्रीय गीत से कम दिल पर छा जाने वाला संगीत।

आज हम यह कह सकते हैं कि ‘इंडिया’ और ‘भारत’ के बीच - उन नामों के बीच नहीं, उन परिकल्पनाओं के बीच - जो द्वंद्व उठ सकता था, वह नहीं उठा है। यह हमारे सामूहिक विवेक और [illegible] की विजय है। ‘भारत’ और ‘इंडिया’ दोनों हमारे महामानवी सागर में एक देह बन गए हैं, गुरुदेव के शब्दों में - ‘एक देहे होलो लीन’।

गांधीजी ने तीनों नामों का प्रयोग, उपयोग किया था - ‘हिंद’, ‘इंडिया’ और ‘भारत’। उन्नीस सौ नौ में लिखी उनकी पहली पुस्तक का शीर्षक था ‘हिंद स्वराज’। उन्नीस सौ उन्नीस को उन्होंने जिस पत्रिका की स्थापना की थी, उसका नाम उन्होंने रखा : ‘यंग इंडिया’। और उन्नीस सौ बयालीस में जिस विशाल आंदोलन का उन्होंने उद्घाटन किया था, वह अंग्रेजी में ‘क्विट इंडिया’ और हिंदी में ‘भारत छोड़ो’ के नाम से जाना गया।

भारत-

आज ‘भारत’ हमारा राष्ट्र है, इंडिया हमारा देश। तो क्या ‘राष्ट्र’ और ‘देश’ में कुछ अंतर है? नहीं भी है और है भी, उस ही तरह जैसे घर के एक संदूक और गांव के एक भांडार में अंतर है, बगिया और बागान में अंतर है, जैसे एक सड़क और राजमार्ग में अंतर है, नदी और दरिया में अंतर है, जैसे कि नानी और ननिहाल में अंतर है। उम्मीदों, आशाओं, अभिलाषाओं से ऊपर भी कुछ होता है, जिसमें इंसान अपनी उम्मीदें, आशाएं ही नहीं, पर कुछ और सिर्फ ‘रखता’ नहीं, पर वहां ‘स्थित’ करता है। अंग्रेज़ी में एक लफ़्ज़ है : ‘रिपोज़’। यू प्लेस योर डिपॉजिट इन अ बैंक, यू ईवन इंवेस्ट देम देयर। यू सेट योर होप्स इन अ [illegible] क्रिकेट टीम, यू हैव एस्पिरेशंस ऑफ़ अ मॉन [illegible]। बट योर ट्रस्ट, योर कांफिडेंस, योर फ़ेथ यू ‘रिपोज़’ इन समवन ऑर समथिंग ईवन हायर, मोर मोमेंटस दैन इन योर कंट्री, यू डु दैट इन योर नेशन व्हिच इज़ आलसो अ सिविलाइज़ेशन। अ राष्ट्र इज़ अ नेशन व्हिच इज़ आलसो अ सिविलाइज़ेशन। भारत में - हमारे राष्ट्र में - हम अपना भरोसा ‘डिपाजिट’

नहीं, 'रिपोज़' करते हैं। स्वतंत्रता आंदोलन के समय हमारे पूर्वजों ने 'भारत' को अपना लक्ष्य बनाया था और उस पर अपनी दृष्टि लगाई थी।

सिनेमा-जगत समय की अपनी एक पहचान देता है। हिंदी सिनेमा के टाइटिलों पर हम निगाह डालें तो पाएंगे कि आज़ादी से पहले उनमें 'भारत' का बोलबाला था : वीर भारत (1924, 1934), नव भारत (1934), भारत का लाल (1936), जय भारत (1936), भारत की बेटी (1935), भारत की सती (1937)।

इंडिया-

आज 'भारत' हमारा राष्ट्र है, तो 'इंडिया' हमारा देश है, उस ही तरह जैसे हमारा खेत हमारा खेत होता है, हमारा दफ़्तर या हमारी फ़ैक्टरी हमारे काम करने की जगह होती है, हमारी कमाई, रोज़गारी, आमदनी, आजीविका हासिल करने की जगह। आम आदमी 'इंडिया' के नाम से वाकिफ़ है, उसका इस्तेमाल करता है, सहज, सरल, स्वाभाविक। उस ही नाम में वह तरक़्क़ी चाहता है, चाहता है जीत, चाहता है हौसला, उम्मीद, चाहता है वह सब कुछ िज स`द की ख़ुशहाली में उसको ख़ुद की ख़ुशहाली भी मिल जावै। यह चाहने वाला आदमी वह है, जो रेलगाडियों, बसों, बैलगाडियों में सफ़र करता है। उस ही को अपने दिल-ओ-दिमाग़ में रख कर डॉ आंबेडकर बोले थे 'वी हैव वर्क टु डु'। प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और डॉ आंबेडकर के आपस में मतभेद थे, पर वे दोनों आम आदमी की सिफ़त को जानते, पहचानते थे। और उस सिफ़त में वे तब बन रहे रिपब्लिक ऑफ़ इंडिया की सिफ़त को भी देख रहे थे।

जैसे सिनेमा जगत में आज़ादी से पहले 'भारत' का बोलबाला था, आज़ादी के बाद 'इंडिया' की बारी आई: 'स्टोरी ऑफ़ इंडिया' (1945), 'मिस इंडिया' (1957), 'मदर इंडिया' (1957) और - मे आई मेंशन इट? - 'ओह डार्लिंग ये है इंडिया' (1995), िजसक भी 'आई लव माय इंडिया' देशभर की ज़ुबान पर चढ़ा था। 'इंडिया' अब जम गया है। 'एयर इंडिया' को ही लीजिए। ऑल इंडिया रेडियो को 'आकाशवाणी' कम कहेंगे, और हम बहुत कम कहेंगे, क्रिकेट के संदर्भ में 'भारत वर्सेस वेस्ट इंडीज़'। जब 'इंडिया टुडे' नाम का एक साप्ताहिक प्रांतीय भाषाओं में उभरता है, तब भी वह 'इंडिया' नहीं छोड़ता। हमारे राजनीतिक दलों ने भी 'इंडिया' अपनाया हुआ है। सीपीआई, सीपीआई-एम, सीपीआई-एमएल, आईएनसी, एआईएडीएमके, सबों ने 'इंडिया' से अपना संबंध बनाया हुआ है,

सिर्फ भारतीय जनता पार्टी ने वैसा नहीं किया, हालांकि 2004 के चुनाव में उस दल ने 'इंडिया' का अपने एक विवादास्पद नारे में उपयोग ज़रूर किया।

एनआरआई कौन है, सब जानते हैं, 'प्रवासी भारतीय' की पहचान अब भी ज़रा दुर्लभ है। तमिल में, 'इंडिया' का कहीं ज़्यादा उपयोग होता है, बनिस्बत कि 'भारत' का हालांकि तमिल महाकवि सुब्रमण्य का तख़ल्लुस 'भारती' था। जब खेल जगत में 'इंडिया' का नाम आता है, तब हम सब 'इंडिया' सुनते ही उठ खड़े होते हैं, तालियां बजाते हैं। बहुत कम सोचते हैं, 'इन्हें 'भारत' कहना चाहिए था'। देहली का 'इंडिया गेट' हमारी प्रभुता और अखंडता का प्रतीक है। 'मेड इन इंडिया' की संज्ञा हमारी उत्पादकता और हमारे कृतित्व को दर्शाती है। और हमें यह भी क़ुबूल करना होगा कि हमारे मिज़ो, नगा और तोड़ा सह-नागरिक ख़ुद को 'इंडियन' ज़्यादा आसानी से कहेंगे बनिस्बत 'भारतीय' या 'हिंदुस्तानी'। ऐसा नहीं कि उनको भारत के 'तरु-मूल' का, उसके 'रूट्स' का एहसास नहीं। अवश्य है, लेकिन शाखाएं जड़ों में नहीं बसतीं, जड़े शाखाओं में, वृक्ष के हर अंग में बसती हैं। ब्रांचेस डु नॉट लिव इन रूट्स, रूट्स लिव इन रूट, ट्रंक एंड ब्रांच।

तो यह है 'इंडिया' और 'भारत' का सिलसिला।

हिंद -

और 'हिंद' या 'हिंदुस्तानी'? वो क्या और कहां है? अगर भारत 'राष्ट्र' है, इंडिया 'देश', अगर भारत 'भवन' है, और इंडिया 'आवास', तो हिंद? वह आवास-निवास नहीं, भवन-प्रासाद नहीं। हिंदुस्तान हमारा बसेरा है, वह हमारा अपना घर है। हिंदुस्तान bt pkV v ly l oh v®u] cV v ly l ovj oh fyoA वह उनका भी घर है, जो बेघर हैं। बल्कि वह उनका खास घर है। वह हममें इंडिया के लिए इज़्ज़त है, भारत पर गर्व हिंदुस्तान हममें, जो कि इंसान को अपने वालिदैन के साथ होता है - बे-फ़र्क़ुई, मुताबियत। हम जब इंडियन होते हैं, तब नागरिकता के भाव में। हम जब भारतीय होते हैं तो देशभक्ति के भाव में। हम जब हिंदुस्तानी होते हैं, तब दस्तूर, तक़ल्लुफ़, औपचारिकताएं नहीं रहतीं। सिर्फ रहती है घर की साफ़दिली, खुली सोच, सरल बोल। वहां विचारों और अल्फ़ाज़ को 'फ़ैंसी ड्रेस' की ज़रूरत नहीं होती, ना ही 'फ़ॉर्मल ड्रेस' की। वहां सारे मनोभाव, हर जज़्बात की बातें आ जाती हैं - मुहब्बत, भरोसा, अफ़सोस, ग़ुस्सा, फिक्र और हां - तड़प।

ऐसा नहीं कि हमें अपने घर पर फ़ख्र नहीं। है क्यूं नहीं। कितना भी छोटा हो, घर क्यूं झोपड़ी हो, उसमें रहने वाले को उस पर फ़ख्र होता है। हम इंडिया के नागरिक हैं, भारत के निवासी। एक के सिटीज़ंस, दूसरे के रेजिडेंट्स। पर हिंदुस्तान नाम के घर की हम हैं औलाद। हम जानते हैं, कि हिंद और हिंदुस्तान में एक तिलिस्म सा है, जिसको इक़बाल ने अपने तराने में, शहीद भगत सिंह ने हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन में और फिर नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने अपने नारे में अमर बना दिया था।

अगर कोई ऐसा नारा है, जो कि एक पल में हमें देश का सिपाही बना देता है और घर का नौनिहाल भी, तो वह है ‘जय हिंद’। वह नारा न हिंदी में है, न उर्दू में। वह है हिंदुस्तान में, हमारे घर को बुलंद बनाने में मग्न।

जब हमारे राष्ट्रीय गान में ‘भारत’ आता है, और जब प्रदीप के शब्दों को सी. रामचंद्र के सुर में लता मंगेशकर ‘ऐ मेरे वतन के लोगो’ में गाती हैं, तो वहां ‘भारतवासी’ आता है। किस भारतवासी का दिल तब पिघल नहीं जाता?

कोई सिख, कोई जाट, मराठा
कोई गुरखा, कोई मद्रासी
सरहद पे मरने वाला
हर वीर था भारतवासी...

और फिर जब उसके बाद के दो जुमले आते हैं, तो किस हिंदुस्तानी का दिल सुन्न नहीं हो जाता?

जो ख़ून गिरा परवत पर,
वो ख़ून था हिंदुस्तानी।

मैं आज प्रदीप को श्रद्धांजलि देना चाहूंगा। उन्होंने ‘भारत’ और ‘हिंदुस्तान’ दोनों को जीवित कर दिया है, और एक ऐसी कृति में, जो न नेशनल एंथम है, न नेशनल सॉन्ग, लेकिन एक ऐसा गीत, जो कि हमारे मन में समा गया है। मेरी पीढ़ी के लोगों को ‘किस्मत’ फिल्म याद होगी, जिसमें प्रदीप जी का गाना आता है, ‘दूर हटो ऐ दुनिया वालो, हिंदुस्तान हमारा है।’ और ‘जागृति’ फिल्म का अमर गान, ‘आओ बच्चो तुम्हें दिखाएं झांकी हिंदुस्तान की।’

मेरी समझ इतिहासविद् की नहीं है। वह राजनीतिविद् की नहीं है। वह किसी तरह के विद्वान की नहीं है। वह एक मामूली गवाह की है। गवाह के नाते इतना कह सकता हूं कि ‘इंडिया’ और ‘भारत’ जो नाम हैं, वे लाजिमी हैं, इस

मायने में कि वे दो हक़ीक़त को दर्शाते हैं, एक आधुनिक, वर्तमान, समसामयिक, और दूसरी प्राचीन, पुरातन, चिरातन। और एक अर्थ में वे दोनों नाम दो गाड़ियों के हैं, वाहन, चक्रयान के। इनको संविधान सभा में अलग-अलग वाहक-चालक मिले थे, दक्ष, निपुण, विश्वसनीय, अनुभवी। लेकिन वाहन वाहन होता है, सवारी सवारी होती है, जो उस वाहन में जा रहा होता है, यात्री जो है, मुसाफिर जो है, वह वाहन से अलहदा है। वह मुसाफिर है। और मेरे दिल में उस मुसाफिर का नाम ‘भारतीय’ या ‘इंडियन’ नहीं। उस मुसाफिर का नाम है ‘हिंदुस्तानी’।

उन्नीस सौ बहत्तर में बनी फिल्म ‘परिचय’ में गुलज़ार साहिब का गाना है ‘मुसाफिर हूं यारो, ना घर है ना ठिकाना।’ किशोर कुमार ने उसको गाया है। उसका जुमला, ‘मुझे चलते जाना है, बस... चलते जाना...’ आम हिंदुस्तानी के उन ख़्यालों को हुरूफ़ और अल्फ़ाज़ देता है, जो कि उसको जिंदगी के क़दम-क़दम पर आते हैं।

‘भारत दैट इज़ इंडिया’, जो है, यानी ‘भारत’ जो है, वह सदैव महान रहेगा - एज़ इन ‘मेरा भारत महान’। ‘भारत’ के नाम में वह है, जो कि उसके शीर्ष के ऊपर एक प्रभामंडल - ‘हलो’ - को स्थापित कर देता है। यह हमारा सौभाग्य है।

‘इंडिया दैट इज़ भारत’ जो है, यानी ‘इंडिया’ जो है, वह कुछ भिन्न है। उसके सिर के ऊपर प्रभामंडल नहीं, पर कई तरह के शिरोवस्त्र हैं, जिनमें आज उल्लेखनीय है - मोटरसाइकिल वाली हेलमेट। इस हेलमेट पहने इंडियन को हर ठोकर और टक्कर के लिए तैयार रहना है, रफ़्तार से आगे बढ़ना है, औरों से आगे, सबसे आगे, औरों से पहले, सबसे पहले, ख़ुद को और औरों को जोखिम में डालते हुए, जहां चार अंगुली का “ रास्ता मिल जाए, वहां घुस जाना है, बढ़ते जाना है।

लेकिन जो प्यादा है, मोटरसाइकिल या मामूली साइकिल पर भी नहीं, उस हिंदुस्तानी को भी चलते जाना है, चरैवेति... रुकना घातक है। वह ज़िंदगी की राह पर कभी धीरे चलेगा, तो कभी मुड़कर, घबराता हुआ, वह ठोकर भी खाएगा, भूल करेगा, ग़लत मोड़ लेगा, लड़खड़ाएगा। पर फिर चलते जाएगा, वह हिंदुस्तानी। उसके घर में या फिर झोपड़ी या ‘माइग्रेंट वर्कर’ वाले फ़ुटपाथ में चार कोयले की सिगड़ी जलती है, जोरू उस पर कुछ बनाती है।

उसके लिए हमें डॉ. आंबेडकर के लफ़्ज़ याद रखने चाहिए - ‘वी हैव वर्क टु डु।’

'वर्क' से मुझे 'मेहनत' का ख़्याल आता है, मुक़ाबलों का। इन मुक़ाबलों में हिमालय की चुनौतियां अहम जगह रखती हैं। इस सभा के मध्य मेरा उनमें जाना ज़रूरी नहीं। लेकिन इतना कहना चाहूंगा कि अगर शेखर पाठक अपनी बढ़िया पत्रिका को 'पर्वत' कहलाते, तब कुछ भूल न होती। इक़बाल ने भी तो 'पर्वत' का इस्तेमाल किया है... 'परवत वो सबसे ऊंचा...'। अगर शेखर जी उसके अंग्रेज़ी संस्करण को 'द माउंटेन' कहलाएं तो वह भी सही होगा, और अ-हिंदी प्रदेशों में भी उसके पढ़ने वाले लाभान्वित होंगे। लेकिन जब शेखर जी उसको 'पहाड़' कहते हैं, तब वह पत्रिका हिंदुस्तानी को ट जात ह, वह हिंदुस्तान की उन अंगुलियों की कड़ी गांठों का परिचय देती है, उन खुरदुरे घुटनों, मज़बूत कोहनियों और तगड़े तलवों का, जो कि साथ ही दिल में ओस के समान नीरव हैं, हृदय में तुषार के समान पवित्र, और मन में हवा समान चलंत। और इन सबके समान दिल का भारी, जेबों का हल्का।

जब हमारे खान खुलते हैं, अपना धन उगलते हैं, जब हमारे कारख़ाने फुर-फुराते हैं, धुआं सुलगाते हैं, जब माल से लदी मालगाड़ियां छुक-छुकाती हैं, लारियां घुर-घुराती हैं, तब भारत उठता है, इंडिया चमकता है, पर हिंदुस्तान, दलितों, आदिवासियों, निष्कासितों, मज़दूरों और आम प्रदूषण-ग्रस्तों का हिंदुस्तान तब सहमता है, सांस रोकता है, सोचता है, मूल प्रश्नों पर हमें पुनर्विचार करने को ललकारता है।

उदाहरणत: मैं पांच, केवल पांच, क़दमों का उल्लेख करता हूं, जो कि अगर इंडिया इंक और भारत सरकार लें तो हिंदुस्तान को सुकून मिलेगा। हाल ही में मैंने अंग्रेज़ी में एक लेख में लिखा था कि हिंदुस्तान के "y d fy, इंडिया 'kM Vd LVu ,D'ku vxLV

- माफियोसी, हू, विद पॉलिटिकल पैट्रोनेज एंड ऑफिशियल कॉनिवेंस इल्लीगली गॉज आउट प्रेशियस मिनरल ओर्स, इन्क्लूडिंग एंड एस्पेशियली कोल, मेकिंग ऑब्सीन प्रॉफिट्स, इन 'ब्लैक मनी' व्हिच दैन फ़ाइंड देयर वे इनटू इ क न कैंपेन एक्सपेंसेस।

- - मर्डरर्स हू हाउंड एंड हंट व्हिसल-ब्लोअर्स बोथ ऑफिशियल एंड नॉन-ऑफिशियल, साइलेंसिंग ब्रेव मेन एंड वुमेन क्वेश्चंस, विद डेथ।

- -मैन्युफेक्चरिंग हाउसेस - व्हिच, हैविंग ऑब्टेन्ड लाइसेंसेज़ एंड इन्फ्रा-स्ट्रक्चर अंडर अवर लिबरेलाइज़्ड प्रोसिजर्स, दैन गो ऑन टु यूज़ लैंड, वाटर, इलेक्ट्रिक पॉवर एंड फ़्यूल डैज़लिंगली अबव देयर लिसिट र , विद नो क्वेंश्चंस आस्क्ड।

-मिसकन्सीवड पॉलिसी अप्रोचेस दैट डिस्काउंट द कैलोरी नॉर्म इन कैलकुलेटिंग पॉवर्टी, देयरबाय मेकिंग अ मॉकरी ऑफ़ पॉवर्टी एलीविएशन इन अ सिचुएशन व्हेयर अ ह्यूज मेजोरिटी ऑफ़ द रूरल पॉपुलेशन इज़ शॉकिंगली कैलोरी-डेफिशिएंट।

- -मिस-गवर्नेंस इन द शेप ऑफ़ ‘वाइडस्प्रेड इनएफिशिएंसी एंड ग्रॉस मिसमैनेजमेंट ऑफ़ रिसोर्सेस’, एज़ प्रेसिडेंट सर्वपल्ली राधाकृष्णन टर्म्ड इट, इन द रैंक्स ऑफ़ द एडमिनिस्ट्रेशन, एट द सेंटर, स्टेट्स एंड लोकल बॉडीज़, बाय हीडिंग रिकमेंडेशन ऑफ़ द एडमिनिस्ट्रेटिव रिफ़ॉर्म्स कमीशन सेट अब बाय यूपीए इटसेल्फ़।

जब तक इंडिया इंक ज़मीन, खनिज पदार्थों, पानी, बिजली और तेल का बेलगाम इस्तेमाल करती रहेगी, तब तक भारत भ्रम में रहेगा और हिंदुस्तान अपने अंदर ही अंदर सिसकियां लेते रहेगा। अगर तरक़्क़ुई की साझा होना है, आमदनी को एकतरफ़ा नहीं, बहुमुखी और व्यापक बनना डय क हिंदुस्तान के गले लगना होगा। इंडिया अपने को बे-उम्र नौजवान, हिंदुस्तान को एक बेइंतहा खान और भारत को महान सोचता है तो वह ग़लत सोचता है।

अहमदनगर जेल में तरुण तपस्वी जवाहरलाल नेहरू ने ‘डिस्कवरी ऑफ़ इंडिया’ लिखी थी। भारत की खोज अमर है, इज़हार-ए-हिंद अपना रास्ता ढूंढ़ रहा है।

भारत, इंडिया और हिंदुस्तान - तीन नाम सही, तीन सत्य, तीन हक़ीक़त। हमें तीनों की पहचान ज़रूरी है, तीनों की मदद ज़रूरी है। एक बिना दूसरा अपूर्ण है, दूसरे के बिना तीसरा अधूरा। एक के उपासक दूसरे को, दूसरे के तीसरे को ना भूलें, यही हमारे संविधान का संदेश है, और यही हमारा कर्तव्य है। भारत पर गर्व, bfM;k e mEehn fuHkj g fgUnLrku dh vkj gekjh fIQr dh lgh igpku ijA

t ;fgnA

ð ð ð ð ð